International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

भारतीय ज्ञान-परम्परा में गुरु शिष्य सम्बन्ध : एक दार्शनिक, ऐतिहासिक एवं शैक्षणिक विश्लेषण

डॉ. नलिनी तिलकर

सहायक प्राध्यापक एवं संस्कृत विभागाध्यक्ष PMCOE, शासकीय माधव महाविद्यालय, उज्जैन

शोध-पत्र सारांश -

भारतीय ज्ञान-परम्परा विश्व की प्राचीनतम, सुव्यवस्थित और जीवंत वैचारिक प्रणालियों में से एक है। इस परम्परा का मेरुदण्ड 'गुरु-शिष्य सम्बन्ध' है, जो केवल सूचनाओं के आदान-प्रदान का माध्यम नहीं, अपितु आत्मबोध, चरित्र-निर्माण और आन्तरिक रूपांतरण की एक पवित्र प्रक्रिया है। प्रस्तुत शोध-पत्र में वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों, पुराणों तथा शास्त्रीय ग्रंथों के गंभीर परिप्रेक्ष्य में गुरु-शिष्य सम्बन्ध के दार्शनिक स्वरूप, ऐतिहासिक विकास, शैक्षणिक आयामों तथा समकालीन शिक्षा जगत में इसकी प्रासंगिकता का विस्तृत विश्लेषण किया गया है। शोध के निष्कर्ष यह दर्शाते हैं कि आधुनिक तकनीकी युग में मानवीय मूल्यों और मानसिक शांति की पुनर्स्थापना के लिए प्राचीन गुरु-शिष्य परम्परा के मूल सिद्धांतों को आत्मसात करना नितांत आवश्यक है।

मुख्य शब्द - भारतीय ज्ञान-परम्परा, गुरु-शिष्य सम्बन्ध, गुरुकुल पद्धति, अध्यात्म, दर्शन, चरित्र-निर्माण, ब्रह्मविद्या।

1. प्रस्तावना -

भारतीय संस्कृति की नींव इस शाश्वत सत्य पर आधारित है कि ज्ञान कोई बाह्य वस्तु नहीं है, बल्कि यह मानव चेतना का आन्तरिक विकास है। इस विकास की यात्रा में गुरु और शिष्य का सम्बन्ध एक उत्प्रेरक और मार्गदर्शक के रूप में कार्य करता है। पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली जहाँ मुख्य रूप से सूचना और कौशल के उपार्जन पर केंद्रित है, वहीं भारतीय ज्ञान-परम्परा विवेक , शुचिता, आत्मसाक्षात्कार और अंततः मुक्ति पर बल देती है।

'गुरु' शब्द का शाब्दिक और दार्शनिकार्थ अत्यंत व्यापक है। स्कन्दपुराण के गुरुगीता प्रसंग में स्पष्ट कहा गया है :

"गुकारश्च अंधकारो रुकारस्तेज उच्यते।
अंधकारनिरोधत्वात् गुरुत्यभिधीयते।।"1

अर्थात् 'गु'कार का अर्थ है अंधकार या अज्ञान, और 'रु'कार का अर्थ है उसका निवारण करने वाला प्रकाश। जो अज्ञान रूपी अंधकार को मिटाकर ज्ञान रूपी प्रकाश प्रदान करता है, वह 'गुरु' है।

2. शोध के उद्देश्य-

1. भारतीय ज्ञान-परम्परा में गुरु-शिष्य सम्बन्ध के दार्शनिक, आध्यात्मिक एवं तात्विक आधारों की गहन मीमांसा करना।
2. वैदिक, उपनिषद् तथा पौराणिक कालीन शिक्षा व्यवस्था में गुरु और शिष्य के परस्पर कर्तव्यों, आचारों एवं मर्यादाओं का विश्लेषण करना।

3. ऐतिहासिक संदर्भों और उच्च कोटि के श्लोकों के माध्यम से गुरु की महत्ता और शिष्य के उत्तरदायित्वों को रेखांकित करना।
4. वैश्वीकरण, बाजारीकरण और आधुनिक कृत्रिम बुद्धिमत्ता के वर्तमान युग में इस परम्परा की प्रासंगिकता और चुनौतियों का मूल्यांकन करना।

3. गुरु-शिष्य सम्बन्ध का दार्शनिक एवं आध्यात्मिक स्वरूप -

भारतीय मनीषा में गुरु को केवल शिक्षक नहीं, अपितु साक्षात परब्रह्म और लोक-कल्याणकारी शक्ति माना गया है। गुरु-शिष्य का यह सम्बन्ध किसी भौतिक अनुबंध या संविदा पर आधारित नहीं होता, बल्कि यह दो आत्माओं का पवित्र आध्यात्मिक संवाद है। गुरुगीता में गुरु के सर्वव्यापक स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा गया है:

"गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।2"

अर्थात् गुरु ही ब्रह्मा हैं, गुरु ही विष्णु हैं और गुरु ही भगवान महेश्वर (शिव) हैं। वे ही साक्षात् परब्रह्म हैं, ऐसे श्रीगुरु को मेरा प्रणाम है।

4. विद्या की वंश-परम्परा -

उपनिषदों में इस सम्बन्ध को 'विद्या' के प्रामाणिक और अविच्छिन्न हस्तांतरण के रूप में देखा गया है। ज्ञान की पवित्रता इसी में है कि वह बिना किसी विकृति के गुरु से शिष्य तक पहुँचे। मुण्डकोपनिषद में ब्रह्मविद्या की इस वंश-परम्परा का सुंदर उल्लेख मिलता है:

"ब्रह्मा देवानां प्रथमः संबभूव विश्वस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता।
स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठामथर्व्याय ज्येष्ठाय पुत्राय प्राह।।3"

अर्थात् ब्रह्माण्ड के रचयिता और पालक, देवताओं में प्रथम ब्रह्मा ने अपने ज्येष्ठ पुत्र अथर्व को सर्वविद्याओं के आधारभूत ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया।

5. ऐतिहासिक विकास और गुरुकुल पद्धति -

वैदिक और उपनिषद् काल में शिक्षा का केंद्र 'गुरुकुल' हुआ करते थे, जो समाज के कोलाहल से दूर प्रकृति की शांत गोद में स्थित होते थे। गुरुकुल में प्रवेश के उपरान्त शिष्य (ब्रह्मचारी) का गुरु के साथ एक आत्मीय और पारिवारिक सम्बन्ध स्थापित हो जाता था। गुरु शिष्य को अपने पुत्र के समान मानकर उसकी आन्तरिक क्षमताओं का परिमार्जन करते थे।
शिष्य की पात्रता, मानसिक शुचिता और समर्पण के विषय में श्वेताश्वतर उपनिषद में उद्घोषित किया गया है:

"यस्य देवे परा भक्तिः यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।।4"

अर्थात् जिनकी परा (अगाध) भक्ति परमात्मा में है, वैसी ही भक्ति जिनकी गुरु में भी है, उन्हीं महापुरुषों को इन शास्त्रों के रहस्य प्रकाशयुक्त होकर भली-भांति समझ आते हैं।

आदर्श शिष्य के लक्षण-

आचार्य चाणक्य ने विद्यार्थी के पाँच प्रमुख लक्षणों का वर्णन किया है, जो एक आदर्श शिष्य के अनुशासन और निष्ठा को परिभाषित करते हैं:

"काकचेष्टा बको ध्यानं श्वाननिद्रा तथैव च।
अल्पहारी गृहत्यागी विद्यार्थी पञ्चलक्षणम्।।5"

अर्थात् कौवे जैसी चेष्टा (प्रयत्न), बगुले जैसा ध्यान (एकाग्रता), कुत्ते जैसी हल्की और सचेत नींद, कम खाने वाला (अल्पहारी) और घर-परिवार के मोह का त्याग कर विद्याध्ययन में रत रहने वाला—ये पाँच विद्यार्थी के उत्तम लक्षण हैं।

इसी प्रकार, महाभारत और स्मृतियों में भी 'श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्' (श्रद्धावान व्यक्ति ही ज्ञान प्राप्त करता है) को गुरु-शिष्य सम्बन्ध का मूल मंत्र माना गया है।

6. ज्ञान सम्प्रेषण की प्रक्रिया: प्रश्न, जिज्ञासा और श्रद्धा -

भारतीय ज्ञान-परम्परा में एकाधिपत्य उपदेश देने वाली शिक्षा प्रणाली का स्थान नहीं था, बल्कि यहाँ 'संवाद' और 'तर्क-वितर्क' को प्रधानता दी गई है। शिष्य की जिज्ञासा और गुरु का अनुग्रह मिलकर ज्ञान को प्रकट करते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान कृष्ण और अर्जुन का संवाद इसका सर्वोत्तम और जीवंत उदाहरण है। ज्ञान प्राप्ति के तीन मूल स्तंभ गीता में बताए गए हैं:

"तद् विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः।।6"

अर्थात् उस तत्वज्ञान को तुम तत्वदर्शी ज्ञानियों के पास जाकर समझो; उन्हें साष्टांग दण्डवत् प्रणाम करने से, उनकी निष्काम सेवा करने से और कपट छोड़कर विनीत भाव से बार-बार प्रश्न पूछने से वे मर्मज्ञ महात्मा तुम्हें उस तत्वज्ञान का उपदेश देंगे।

यहाँ 'प्रणिपात' (अहंकार का त्याग और समर्पण), 'परिप्रश्न' (सार्थक और सच्ची जिज्ञासा) तथा 'सेवा' (कर्मठता और आदर) ही गुरु-शिष्य सम्बन्ध की त्रिवेणी हैं, जिसके बिना ज्ञान का अवतरण संभव नहीं है।

7. आधुनिक शिक्षा प्रणाली बनाम प्राचीन गुरु-शिष्य परम्परा -

आज का युग वैश्वीकरण, बाजारीकरण और कृत्रिम बुद्धिमत्ता का युग है। इस व्यावसायिक दृष्टिकोण के कारण गंभीर चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं:

मूल्यों का ह्रास: शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मात्र रोजगार प्राप्ति, भौतिक सफलता या उपाधि प्राप्त करना रह गया है।

संवेदनशीलता और आत्मीयता का अभाव: गुरु और छात्र के मध्य वह नैतिक, भावनात्मक और पवित्र बंधन कमजोर हुआ है।

मानसिक तनाव और अवसाद: आत्मकेंद्रित जीवनशैली, अत्यधिक प्रतिस्पर्धा और नैतिक आधार के कमजोर होने के कारण विद्यार्थियों में मानसिक असंतुलन और अवसाद बढ़ा है।

तथापि, प्राचीन गुरु-शिष्य परम्परा के शाश्वत मूल्य आज भी पूरी तरह प्रासंगिक हैं। यदि आधुनिक शिक्षा में 'मार्गदर्शन', 'मूल्यपरक शिक्षा' और 'सहानुभूतिपूर्ण संवाद' को जोड़ दिया जाए, तो आज की अनेक शैक्षणिक व मानसिक समस्याओं का सहज समाधान हो सकता है।

8. निष्कर्ष -

भारतीय ज्ञान-परम्परा में गुरु-शिष्य सम्बन्ध केवल एक शैक्षणिक, संस्थागत या औपचारिक व्यवस्था नहीं है, बल्कि यह मानवीय चेतना के उत्थान और समाज के कल्याण का सुदृढ़ सेतु है। गुरु वह प्रकाश पुंज है जो शिष्य के जीवन से अज्ञान का अंधकार दूर कर उसे आत्मसाक्षात्कार और लोक-कल्याण के मार्ग पर अग्रसर करता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम आधुनिक तकनीकी शिक्षा और प्राचीन भारतीय नैतिक मूल्यों का सुंदर समन्वय करें, ताकि एक ऐसे प्रबुद्ध समाज का निर्माण हो सके जो केवल तकनीकी रूप से सक्षम ही नहीं, अपितु उच्च चरित्रवान और संस्कारित भी हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची एवं पादटिप्पणी

1. स्कन्दपुराण, उत्तरखण्ड, गुरुगीता, श्लोक ३३
2. गुरुगीता, श्लोक १३
3. मुण्डकोपनिषद, मुण्डक १, खण्ड १, मन्त्र १
4. श्वेताश्वतर उपनिषद, अध्याय ६, मन्त्र २३
5. चाणक्य नीति, अध्याय ११, श्लोक १५
6. श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय ४, श्लोक ३४
7. श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस, गोरखपुर, संस्करण २०१७।
8. मुण्डकोपनिषद, शांकरभाष्यसहित, गीताप्रेस, गोरखपुर।
9. स्कन्दपुराण (उत्तरखण्ड), गुरुगीता प्रसंग, नाग प्रकाशन, दिल्ली।
10. श्वेताश्वतर उपनिषद, कल्याण अंक, उपनिषद विशेषांक, गीताप्रेस, गोरखपुर।
11. चाणक्य नीति, आचार्य चाणक्य, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
12. अल्तेकर, ए.एस. (२००१), प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली।
13. शुक्ल, डॉ. राममूर्ति (२०१५), भारतीय शिक्षा और दर्शन का इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
14. Sharma, R.S. (2005), Aspects of Political Ideas and Institutions in Ancient India, Motilal Banarsidass, Delhi.
15. Radhakrishnan, S. (1992), The Principal Upanishads, HarperCollins Publishers India.